साहित्य मंथन
भारते भातु भारती
Sahitya Manthan
A Peer-Reviewed, Open Access e-journal
ISSN: 2582 6867, Website: http://www.sahityamanthan.in
Year-2, Issue-10, Continuous Issue-16, November - December 2022

३. हर्षदेव माधव के साहित्य में ललितकला विमर्श

(काव्यकला के संदर्भ में)

कला किसी भी संस्कृति एवं विचारधारा का प्रतीक है, उसकी पहचान है । मानवजीवन में कला का महत्वपूर्ण स्थान है । भारतीय संस्कृति में कला की समृद्ध विरासत रही है । वह सत्यम् शिवम् एवं सुन्दरम् के आदर्श पर आधारित रही है । प्रत्येक कलात्मक प्रक्रिया का उद्देश्य सौन्दर्य तथा आनंद की अभिव्यक्ति होता है । प्राचीन भारत में कला को साहित्य और संगीत के समकक्ष मानते हुए मनुष्य के लिए उसे आवश्यक बताया गया है- भर्तृहरि ने अपने नीतिशतक में स्पष्टत: लिखा है कि- ‘ साहित्य, संगीत तथा कला से हीन मनुष्य साक्षात् पशु के समान है ।’[१]

‘ कला ’ शब्द संस्कृत की ‘ कल ’ धातु में कच् तथा टाप् प्रत्यय लगाने से बनता है । संस्कृत के कोश में यह शब्द विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त हुआ हैं- जैसे खण्ड, चंद्रमा की एक रेखा, शोभा, अलंकरण, कुशलता आदि । किन्तु इतिहास तथा संस्कृति में ‘ कला ’ से तात्पर्य सौन्दर्य, सुन्दरता अथवा आनन्द से है । रीता तिवारी ने कला के संदर्भ मे लिखा है कि- ‘ संस्कृत भाषा में कला शब्द की सिद्धि ‘ कल ’ धातु से हुई है । जिसका अर्थ ‘ संख्यान’ है । संख्यान शब्द की सिद्धि “ ख्या ” धातु से न होकर जिसका अर्थ कथन, घोषणा करना या संवाद होता है; बल्कि ‘
संख्यान ’ शब्द की सिद्धि ‘ चक्षिंङ्’ व्यक्तायाम् वाचि ’ से है जिसका अर्थ स्पष्ट वाणी में प्रकटन होता है ।’[२] इसी अर्थ में महाकवि कालिदास ने कुमारसंभव में इसी शब्द का प्रयोग इस प्रकार से किया है- ‘ श्रुताप्सरो गीतिरपि क्षणेऽस्मिन् हर: प्रसंख्यानवरो बभूव..... ।’[३] अर्थात् उस समय केवल शिव ही दिव्य अप्सराओं के गीतों को सुनकर भी आत्मानुसंधान में लगे रहे ।

कला शब्द इतना व्यापक है कि विभिन्न विद्धानों की परिभाषाएं केवल एक विशेष पक्ष को छूकर रह जाती है । भारतीय परंपरा के अनुसार कला उन सारी क्रियाओं को कहते हैं, जिसमें कौशल अपेक्षित हों-
मैथिलीशरण गुप्त- ‘ अभिव्यक्ति की कुशल शक्ति ही तो कला है ।’
रवीन्द्रनाथ टैगोर- ‘ जो सत्य है, सुंदर हैं वही कला है ।’
वासुदेवशरण अग्रवाल- ‘ कला किसी विचार या कल्पना को द्रश्यरूप देती है ।’
प्लेटो- ‘ कला सत्य की अनुकृति है ।’
टोल्सटोय- ‘ कला भावना की भाषा और तत्वत: अभिव्यक्ति है ।’
पाणिनि- कला शब्द की सिद्धि पाणिनि के ‘ पुंसि संज्ञायां ध: प्रायेण ’[४] सूत्र के अनुसार हुई ।
शब्दकल्पद्रुम के अनुसार कला शब्द की व्युत्पत्ति- ‘ कलयति वृद्धितो धनं संगृह्णाति सैंच्चिनोतीत्यर्थ ।’

वस्तुत: हृदय की गहराईयों से या सच्चे मन से मानवीय भावनाओं को व्यक्त करने के लिए की गई सुन्दर प्रस्तुति ही कला है । जैसे- मूर्ति बनाना, चित्र बनाना, भवन निर्माण, गीत, काव्य रचना आदि ।

कला का वर्गीकरण :

कला परंपरा इतनी अधिक प्राचीन है कि जिसका ज्ञान आज हम पुरातत्व विभाग के अन्वेषणों तथा प्राचीनतम साहित्य के अध्ययन से ही प्राप्त कर सकते हैं । वैदिक साहित्य में लोहारी, सोनारी, बुनाई, केशसंस्कारकला, चित्रकला, भैषज्यकला, संगीतकला, वास्तुकला नृत्यकला, नाट्यकला, काव्यकला आदि अनेक कलाओं का उल्लेख मिलता हैं । ऐसी मान्यता है कि वैदिक युग में कलाओं का कोई वर्गीकरण नहीं किया गया । भारतीय कला के इतिहास में कलाओं का सर्वप्रथम विभाजन ‘ मूल ’ तथा ‘ अन्तर ’ कलाओं के रूप में ही किया गया । इसके विभाजन कर्ता बभ्रुपुत्र पांचाल थे । इसके पश्चात् ऐसा ज्ञात होता है कि भरतमुनि ने कलाओं का वर्गीकरण मुख्य तथा गौण दो वर्गों में अपने ग्रंथ नाट्यशास्त्र में किया है । उनका यह विचार है कि नाट्यकला में अन्यकलाओं का उचित समावेश हो जाता है ।’[५] आचार्य भरत के अनन्तर भारत के आध्यात्मवादी चिन्तकों ने कलाओं का विभाजन इस तरह किया हैं- (१) ललितकला- सौन्दर्य से सम्बन्धित कला (२) उपयोगी कला- मानव उपयोग से सम्बन्धित कला

ललितकला :

कलाओं का एक विभाजन रस तथा भाव-प्रधानता के आधार पर किया गया जिसे ललितकला से अभिहित किया गया । ‘ ललितस्य भाव इति लालित्यम् ।’ अर्थात् जिस कला में अपेक्षाकृत अधिक सौन्दर्य

तथा आकर्षण का भाव हो उसे ललितकला कहा जाता है । प्राचीन भारत में ६४ कलाओं की गणना मुख्यरूप से वात्स्यायन द्वारा की गयी थी । किन्तु आगे चलकर सम्भवत कुछ ऐसी कलाओं की गणना पृथक रूप से की जाने लगी, जिनमें लालित्य था और इसी आधार पर उन्हें ललितकला के नाम से संबोधित किया जाने लगा । रीता तिवारी ने अपने ग्रंथ[६] में निम्नलिखित कलाओं को ललित कलाओं की श्रेणी में रखा हैं-

1. काव्य अथवा नाट्यकला
2. संगीतकला
3. वास्तुकला अथवा स्थापत्य कला
4. मूर्तिकला
5. चित्रकला

ललितकलाओं में ये पाँच भाव हमारे सामने आते हैं । जिसमें काव्य अर्थप्रधान तथा भावरूप है । इसी के साथ संगीतकला ध्वनि–प्रधान होने के साथ साथ भाव-प्रधान भी है । संगीत के साथ साथ नृत्यकला तथा नाट्यकला भी कला के भावरूप का विकास ही है । २० वीं शताब्दी के बाद ललितकलाओं के विभाजन में कुछ बदलाव आया है- जैसे (१) वास्तुकला (२) मूर्तिकला (३) संगीतकला (४) चित्रकला (५) नृत्य (६) साहित्य (७) सिनेमा

उपरोक्त कलाओं को निम्नलिखित प्रकार से भी श्रेणीकृत कर सकते हैं-

- साहित्य- काव्य, उपन्यास, लघुकथा, महाकाव्य आदि
- निष्पादन कलाएं- संगीत, नृत्य, रंगमंच
- दृश्यकलाएं- चित्रकला, मूर्तिकला
- मिडियाकला- फोटोग्राफी, सिनेमेटोग्राफी, विज्ञापन

हर्षदेव माधव का साहित्य एवं ललितकला विमर्श :

आधुनिक संस्कृत जगत् में बीसवीं शती के प्रतिनिधि कवि के रूप में पहचाने जाने वाले हर्षदेव माधव संस्कृत कविता में नव शैली के प्रवर्तक के रूप में प्रतिष्ठित हो गये हैं । वे विश्व मानवता के वाचक एवं मानवीय संवेदनाओं के गायक हैं । उन्होंने अपने रचना संसार में नवीन रूपों, प्रयोगों और विदेशी तथा देशज काव्यविधाओं को प्रस्थापित करके मानो संस्कृत भाषा और साहित्य को पूरे विश्व के साथ जोड़ दिया है । हर्षदेव माधव की प्रत्येक रचना अपने नवोन्मेष के कारण पाठक को चमत्कृत करती रहीं हैं । उनकी कविता में संस्कृत कविता का आधुनिकीकरण एवं आंतरराष्ट्रीयकरण है । आधुनिक संस्कृत कवि हरेकृष्णमेहेर की वाणी से निसृत कवि हर्षदेव के प्रति प्रशंसा सूक्ति-

अर्वाचीने मधुर-रचना वाङ्मये यस्य दीप्ता
शं-संपन्ना सुरभि-भरिता काव्यधर्माभिरामा ।
नव्या भव्या सहृदय मनोहर्षदाकर्षणीया
स ज्योतिष्माँल्लसतु सुकवि-र्माधवो हर्षदेव ॥ (डॉ.हरेकृष्णमेहेर)

गुजरात के सुप्रसिद्ध संस्कृत कवि हर्षदेव माधव आधुनिक संस्कृत साहित्य के सर्वाधिक अपारम्परिक कवि हैं । कालजयी संस्कृत काव्यों का इनका अध्ययन भी असमग्र है और भाषा अटपटी तथा प्रचलित मुहावरे से हटकर है । हर्षदेव माधव का नाम सुनते ही भारतभर में संस्कृत सेवियों के मानस में जो भाव उभरते हैं उनमें तीन चार संज्ञाएं अंतर्भूत रहतीं हैं । नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा की संस्कृत में अवतारणा, काव्यविधाओं में देशविदेश से नई विधाओं का आयात, कथ्य और शिल्प दोनों में नये प्रयोग आदि । प्रयोगधर्मी कविता के पर्याय के रूप में जाने जाने वाले डॉ. हर्षदेव माधव का एक नया आयाम पिछले दशक में और देखने को मिला है । वह है काव्यशास्त्र की परंपरा में भी कुछ नवीन विचारतत्वों और सिद्धांतों की अवतारणा ।

यह प्रयोगधर्मिता डॉ. हर्षदेव माधवने केवल काव्यक्षेत्र में ही नहीं दिखाई है, सब क्षेत्र में, कथा क्षेत्र में, डायरी शैली के लेखन में और नाट्यक्षेत्र में अनेक नए प्रयोग कर एक व्यापक फ़लक पर सर्जन की सरिता बहाई है । अपनी साहित्य साधना से आर्वाचीन संस्कृत जगत को स्तब्ध कर देने वाले इस साधक ने विश्वमंच पर अपनी एक पहचान दी है । ऐसे चमत्कारिक चिंतन के धनी डॉ. हर्षदेव माधव ने अपने व्यापक वर्ण्य विषय को चित्रात्मकता, इंद्रियग्राहयता और साम्य सौन्दर्य से सजाकर अन्य भाषीय साहित्य के मध्य अग्रिम पंक्ति में बैठाने का श्रमसाध्य कार्य किया है । हर्षदेव माधव की कविता देशकाल की क्षुद्र सीमाओं से के परे वैश्विक चेतना का स्पर्श करती है । वे अपनी कविता में व्यापक विषयों को उठाते हैं तथा नवीन प्रयोगशीलता, संवेदनात्मकता, तथा विश्लेषणपरकता के साथ प्रस्तुत कर व्यष्टि से समष्टि की यात्रा तय करते हैं । प्रो.कुंदनमाली ने अपने विचार इस तरह रखते हैं- ‘ हर्षदेव की कविता संस्कृत काव्य में नवप्रवर्तन को संभव करने वाली कविता मानी जानी चाहिए ।[७]

काव्यकला : अपने अस्तित्व और पहचान के लिए किसी भी रचनाकार को कविता की वस्तु और रूप में कुछ नया जोड़ना पड़ता है । किन्तु इन दोनों का सम्यक् गुंफन ही उत्कृष्ट रचना का प्राण–तत्व होता है । हर्षदेव माधव की कविताओं में कथ्य और शिल्प का संतुलन प्राय: सर्वत्र विद्यमान रहा है । कवि माधव के रचना–रूप की बात की जाय तो, कहा जा सकता है कि वास्तव में संक्षेपण के कवि हैं । स्वल्पतम शब्दों में अपनी बात कहना माधव की रचना–प्रक्रिया की अन्यतम विशिष्टता है । यही वैशिष्टय उन्हें नयी कविता के समकालीन इतर कवियों से एकदम पृथक् खड़ा कर देता है । कवि माधव अभिधा में कुछ कहते ही नहीं हैं, वे हमेशा सादृश्यों में बात कराते हैं, वह भी नयी नयी वचन-भंगीमाओं के साथ । उनके गहन विचार एवं भाव–शृंखलाएं संवेदना का संस्पर्श पाकर बिम्बों, प्रतीकों और मिथकों में ही आकार ग्रहण करती है ।
राधावल्लभ त्रिपाठी के शब्दों में- ' उन्होंने सीजो, तान्का, हाईकू, मोनोइमेज जैसी विदेशी विधाओं में विपुल काव्य रचा है । बंगाल के बाउल गीतों को मुक्त छंद के संस्कृत काव्य में उतारा है । गझल और लोकगीतों की भूमि पर भी पद रखे हैं । उनकी कुछ कविताएं ग्राफ़ों, मानचित्रों या चित्राकृतिओं तक में लिखी गई हैं, जो संस्कृत की चित्रकाव्य परंपरा आधुनिक भावबोध के साथ नया अवतार है ।[८]

हाईकू उनकी कविता का नया रूप हैं । जो मूलत: जापान से आई विधा है । यह ५-७-५ के वर्णक्रमवाली तीन पङ्क्तिओं की १७ अक्षरों वाली कविता है । सरोज कौशलजी ने हर्षदेवजी की काव्यकला के संदर्भ में अपने विचार इस तरह प्रस्तुत किये है- ' संस्कृत हाईकू के आदि प्रणेता डॉ. हर्षदेव माधव ने हाईकू में बिम्ब, मिथक, आदि के द्वारा चमत्कार का आविष्कार स्वीकार किया है ।'[९] ' ऋषे:क्षुब्धे:चेतसि ' काव्यसंग्रह में टेलिग्राफिक भाषा को माध्यम बनाया गया है । यह हाईकू, तान्का व सीजो का काव्यसंग्रह है । हाईकू के कुछ उदा. रसविहीनं/ चारुगीतं कुसुमं/ गंधवर्जितम् ।[१०] यहां वनिता के अर्थहीन बाह्यसौंदर्य तथा मर्मरहित अंत:मन को व्यज़्जित किया गया है । इस काव्यसंग्रह में वर्षा के विविध रंग बिखरे हैं । जैसे– मेघो वर्षति/ गृह समीपे तिष्ठन्/ गर्दभ स्नाति ।[११] ' वासकसज्जा ज्योत्सना ' काव्यसंग्रह के कुछ हाईकू- चन्द्रो हसति/ कृतकृतं करोति/ जलद शिशु: ।[१२] यहां प्रकृति का रूपक उपस्थापित किया गया है । मेघ में बालत्व का आरोप किया गया है । रति या प्रेम हर्षदेव माधव की कविता में नाना रूपों में अभिव्यक्त हुआ है- सौरभं भूत्वा/ प्रविष्टा सा जातोऽस्मि/ कुसुमपात्रम् ।[१३] माधव राष्ट्र-चेतना जागरण के पुनीत कर्तव्य का पालन कराते है- निशीथे सिंहनाद:/ सुप्ता जागर्ति/ राष्ट्रचेतना ।[१४] अन्य एक हाईकू में कवि ने गाणितिक सज्ञाओं का प्रयोग किया है-

ऑफिस-चिन्ता
×गृहिणी+उपनेत्र'।
÷क्षय:=जीवितम् ॥[१५]

परंपरागत प्रतीक ' पर्ण ' का गिरना इस विषय को लेकर हर्षदेव ने टायपोग्राफ़ी में मृत्यु की व्यंजना प्रकट की है-

पाण्डुर सूर्य:
शु
ष्क
प
र्ण
प
त
न
म् / तिमिरथ ॥[१६]

अन्य एक हाईकू- चटका: स्नान्ति/ सूर्यकिरण-धूलौ/ जीवति वृक्ष: ॥[१७] यहां देखा जाए तो सूर्यकिरण परमात्मा का स्वरूप है, धूल माया है और वृक्ष जीवन है ।

तान्का में पाँच पङ्क्तियां एवं ३१ अक्षर है- ५-७-५-७-७ । तान्का की गणना उर्मिकाव्य में होती है । कुछ उदा. भिक्षुको याति/ नगरे लावारस:/ जन सम्मर्दे/ शतध्नीमुख-समा/ सहसा पुररथ्या ।[१८] इस तान्का में मनुष्य की संवेदनहीनता पर कटाक्ष किया है । कवि ' अलकनंदा ' को अपनी प्रेयसी बनाकर अपने प्रणय भावों को शब्दरूप देते है- पाटलं पुष्पं/ त्वया प्रदत्तम् मार्गे/ हृत पुष्पायाते/ पाटल पल्लवेषु/ जातस्त्रे वक्त्रस्पर्श: ।[१९] अन्य एक तान्का में कवि ने गुजराती मेले का चित्रण किया है- समाजोत्सव:/ युवतीनांगीतेषु/ यूनां चेतांसि/ युवतीनां मनांसि/ उष्णिक्चित्रवर्णेषु ।[२०]

सीजो काव्य का आरंभ हर्षदेव ने १९८७ में किया । सीजो काव्य दक्षिण कोरिया का काव्य स्वरूप है । यह काव्य स्वरूप तीन पङ्क्तिओं में एवं ४५ वर्णों में सम्पूर्ण चित्र प्रस्तुत करता है । सीजो काव्य में कवि ने गीत-गझल तथा छांदस-अछांदस स्वरूपों का आश्रय लिया है । जैसे-

गीत का लय
कुम्भस्नाने मग्ना: सर्वे
क्लिन्न शरीरा याता: ।
धावन्ति गायन्ति स्नान्ति
किं स्नाता: खलु स्नाता:?
मयि मृत्तिका गर्भे
गङ्गाया: धारा जाता: ॥[२१]
संगीत का तत्व
अश्वो जातो जातो वायु:
जात: सूर्यो मनांसि
शैला: नद्य: वृक्षा: आशा
वसन्ति मे रहसि ।
मृद: प्रत्यणु मयि
त्वमसि तत् त्वमसि ॥[२२]

इस काव्य में कवि ने भारत की आध्यात्मिक चेतना को उजागर किया है । कभी उनके सीजो में छान्दस प्रयोग भी नजर आते है-

छान्दस प्रयोग
दूरं गता ते विजयस्य शब्दा:
दृष्टो न स:
स सैनिका अश्वरथा: प्रयाता:
दृष्टो न स:
प्रतिनिवृता मनसि विलापा:
वीरो गत: ।[२३]

आधुनिक संस्कृत साहित्य में एकबिम्बीय काव्य की प्रतिष्ठा में श्री हर्षदेव माधव का ही विशिष्ट योगदान है । अलकनंदा, रथ्यासु जंबुवर्णानां शिराणाम्, निष्क्रांता सर्वे, लावारसदिग्धा: स्वप्नमया: पर्वता, आसीच्च मे मनसि आदि काव्यसंग्रहों में कवि ने अपनी एकबिम्बीय कविताएं प्रस्तुत की हैं । एकबिम्बीय काव्य अर्थात् एक हि वस्तु को कितने आयामों में देखा और बखाना जा सकता हैं, यह कवि की कल्पना का हम अनुभव करते है । जैसे- ' पिपीलिका ' शीर्षक कविता में चींटी के दंश से पहाड़ के कांप उठाने की कल्पना- पिपीलिकादंशेन/ पर्वत: समूलोऽकम्पत ॥[२४] मृत्युशतकम् काव्य में कवि ने १०० से अधिक एक बिम्बात्मक काव्य दिये हैं । इस काव्य में कवि ने मृत्यु को अलग अलग दृष्टि से देखा है जैसे- मृत्योरनुभव:/ सरोजलनिमज्जनकल्प: ।[२५] और मृत्युर्थात्/ तमिस्त्रे / दीपस्य पलायनम् ।[२६] स्थितप्रज्ञता के विचार को कवि ने ' स्नानगृह ' के बिम्ब द्वारा इस तरह प्रस्तुत किया है- स्नानगृहे / उष्णजलमस्ति दु:खम् / शीतलजलमस्ति सुखम् / ज्ञानी / दु:खसुख समे कृत्वा स्नाति ।[२७]

आधुनिक संस्कृत में अछान्दस कविता की रचना का श्रेय हर्षदेव माधव को हैं । हर्षदेव के लावारसदिग्धा: स्वप्नमया: पर्वता, आसीच्च मे मनसि, पुरा यत्र स्त्रोत, मृत्युशतकम्, अलकनंदा, कालोऽस्मि, निष्क्रांता सर्वे, मृगया, रथ्यासु जम्बुवर्णानां शिराणाम्, सुधासिन्धोर्मध्ये, भावस्थिराणि जननान्तर सौहृदानि आदि काव्यसंग्रहों में कविताएं अछान्दस हैं । कुछ उदा. अधुनाऽहं न जीवितं जीवामि / किन्तु भयं जीवामि ।[२८] यहां भयभीत मनुष्य का चित्रण है । कवि की कल्पना से अलकनंदा अज्ञात रहस्यमयी प्रणयिनी है, जैसे- हे अलकनंदे ! प्रत्युत्तरो मया/ संदेश विरहिते मदनलेखे/ अर्धदग्ध पतङ्गस्य पक्ष: एक प्रेषित: ।[२९]

गीत और गझल रचनाएं भी कवि श्री हर्षदेव की विशेषता रही हैं । श्री हर्षदेव की संस्कृत गीत रचना के प्रति लगाव गुजराती कविता के संपर्क के कारण है । ' हाथ फंफोसे आंधला सुगंधने ' उनका गुजराती गीत-गझलों का संग्रह हैं । निष्क्रांता सर्वे, रथ्यासु जम्बुवर्णानां शिराणाम्, भावस्थिराणि जननान्तर सौहृदानि आदि काव्यसंग्रहों मे कुछेक गीत रचनाएं हैं । कुछ उदा. स्वतन्त्रता पर एक गीत रचना- कोटि कोटि जीवरम्य प्राथना स्वतंत्रता/ कोटि कोटि मंत्रदिव्य भावना स्वतन्त्रता... ।[३०] एक लय प्रधान गीत- चूतकलिके ! चूतकलिके ! / अयि हे वासकसज्जे ! वधूके ! ।[३१] गझल एक अत्यंत समृद्ध प्रकार है । गझल का विषय प्राय: शृंगारप्रधान है, फिरभी प्रकृति, विरह आदि प्रसंगों का चित्रण होता रहा है । ' निष्क्रांता सर्वे '

काव्यसंग्रह का प्रथम गझल का शेर– पञ्च गता हा प्राणा:/ वा निष्क्रांता: सर्वे/ दूरं याता श्वासा:/ वा निष्क्रांता सर्वे । प्रणय के भाव को व्यक्त करती हुई गझल- कलकल:प्रादुर्भूतो नीडे मयी/ उड्ड्नमयी संमतिस्त्वं सारसि । वक्षसि श्वासायते एटलान्टिक:/ कौमुदीनां संहतिस्त्वं सारसि ॥[32] यहां कवि ने एटलान्टिक समुद्र के विस्तार को श्वास में समा लिया है, और प्रियतमा के रूप को कौमुदी के संघात में विस्तार किया है । प्रकृति विषयक गझल- वने न हि निवसन्ति वृक्षा:/ वनमेतद् रचयन्ति वृक्षा: । कुत्र गतस्त्वं रात्र्यमन्धा:/ इति ध्वान्ते पृच्छन्ति वृक्षा ॥[33]

वस्तुत: हर्षदेव की कविता की भाषा रचनात्मकता की जटिल चुनौतियों से जूझते एक समकालीन संस्कृत कवि की भाषा है । भारतीयता कवि हर्षदेव की कविता की विशेषता है । भारतीयता का आशय यह भी है कि कवि अपनी धरती पर तो स्थिर पाँव रखकर खड़ा हो, पर अपनी दृष्टि से निखिल भुवन को निखार शके । इस तरह संस्कृत का रचनाकार तथा चिंतक अपनी जमीन और आवास में स्थिर रहकर विश्वजनीन प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति का भी माध्यम बन जाता है । हर्षदेव की कविता में यह सत्य कथन कई स्तरों को भेदता है । वे जीवन में उन पक्षों को उघाड़ते हैं, जिन पर आम तौर पर आज के अन्य संस्कृत कवि कोई चर्चा करना नहीं चाहते । हर्षदेव की काव्यरचना प्रक्रिया इतर समकालीन संस्कृत कवियों से किंचित भिन्न प्रतीत होती है ।

संदर्भ-

1. साहित्यसंगीत कला विहीन: । साक्षात्पशु पुच्छविषाणहीन: ॥ नीतिशतक-श्लोक-१२
2. आधुनिक संस्कृत नाट्यसाहित्य और सौन्दर्यकलाशास्त्रीय तत्व, रीता तिवारी, प्रका. प्रतिभा प्रकाशन,दिल्ली, प्रथम संस्करण- २००८, पृ. २९
3. कुमारसंभवम्, कालिदास- सर्ग-३/४०
4. अष्टाध्यायी, पाणिनि, ३-३-११८
5. ना.शा. भरतमुनि, अध्याय-९
6. आधुनिक संस्कृत नाट्यसाहित्य और सौन्दर्यकलाशास्त्रीय तत्व, रीता तिवारी, प्रका. प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्कारण -२००८, पृ. २९
7. आधुनिक संस्कृत की नई दिशाएं- डॉ. हर्षदेव माधव अभिनंदनग्रंथ, संपा. डॉ. अशोक पटेल आदि, प्रका. पार्श्व पब्लिकेशन, अहमदाबाद, प्रथम आवृति- २०१५, पृ. ११९
8. वही, पृ. १४
9. वही, पृ.१७५

१०. ऋषे:क्षुब्धे:चेतसि- पृ.७
११. वही, पृ.८
१२. वासकसज्जा ज्योत्सना- पृ.१२९
१३. वही, पृ.६०
१४. अत्रान्तरे- पृ.२६
१५. संविद्-फरवरी- १९८२, पृ.४२
१६. वही, मई. १९८०, पृ.१५
१७. लवारस दिग्धा स्वप्नमया पर्वता- पृ.२६
१८. ऋषे:क्षुब्धे:चेतसि- २३
१९. वही,- ८
२०. अर्वाचीन संस्कृतम्- अंक २, १९९०, पृ.१०१
२१. देववाणी सुवास, डॉ.राजेंद्र मिश्र, पृ. ३,०६९
२२. वही.
२३. वही, पृ.३,०७२
२४. निष्क्रांता सर्वे- पृ.१३६
२५. मृत्युशतकम्- काव्य-३०
२६. वही, काव्य-२५
२७. आसीच्च मे मनसि- पृ.७
२८. मृगया- ७,८
२९. भा.ज.सौ. पृ. ८५
३०. वही,- पृ.१६२
३१. निष्क्रांता सर्वे- पृ.१७५

३२. र.ज.शि.- पृ.२५
३३. वही, पृ.२६

डॉ. अशोक एम. पटेल

एसोसिएट प्रोफेसर (संस्कृत विभाग)

आर्ट्स कॉलेज, मोड़ासा, जि-अरवल्ली

३८३३१५